IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारतीय ज्ञान परम्परा और साहित्य

डॉ. तृप्ति उकास
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी
शासकीय महाकोशल कला एवं वाणिज्य
स्वशासी महाविद्यालय, जबलपुर, म.प्र.

शोधसार

भारतीय ज्ञान परंपरा एक निर्मल, निश्चल, पवित्र निर्झरिणी है। जिसमे सहस्त्रों ऋषि-मुनियों की आस्था, मूल्य, आदर्श, दर्शन, ज्ञान, संस्कृति, सभ्यता, संस्कार, पद्धतियाँ, कर्म, भक्ति एवं जीवंत भावनायें समाहित हैं। यह परंपरा किसी एक तत्त्व को लेकर चलने वाली नहीं, वरन एक व्यापक विराट संचेतना है, जिसने अपने अंतस में भारत के कण-कण में समाहित ज्ञान को स्थान प्रदान किया है। यह ज्ञान परंपरा सहस्त्रों सूर्यों की रश्मियों के समान अनंत प्रकाश वाली है। जिसमें ज्ञान की समस्त धारायें अपने-अपने स्थान पर तो चमत्कृत होती ही हैं, साथ ही एक दूसरे के साथ संपृक्त होकर द्विगुणित हो उठती हैं। यही प्रकाश बिंदु भारतीय ज्ञान परंपरा है। इस ज्ञान परंपरा की निर्झरणी में यदि हिंदी साहित्य के प्रतिबिंब का दिग्दर्शन किया जाए तो वह भी हीरकमणी के समान द्योतित होता हुआ नजर आता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा है क्या? इस जिज्ञासा के मन में उठते ही कल्पना तत्काल वेदों की ओर गमन करती है और वेद भारतीय संस्कृति, ज्ञान और सभ्यता का मूल हैं। उन्हीं से समस्त भाषाओं का, ज्ञान के समस्त स्वरूपों का जन्म हुआ है। संस्कृत की पुत्री कही जाने वाली हिन्दी उसी ज्ञान को विभिन्न विधाओं के रूप में प्रत्येक जिज्ञासु तक पहुँचाती है। इसी ज्ञान परंपरा का निर्वहन करते हुए हिन्दी साहित्य अपने कर्म पथ पर अग्रसर होता है।

हिन्दी साहित्य से मंडित भारतीय ज्ञान परंपरायें सनातन धर्म के वैशिष्ट्य से परिपूर्ण होकर इस विश्व को निरंतर परिपूर्णता का आभास कराती रही हैं। उसका प्रभाव विश्व को प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त किए हुए है। भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग प्राचीन जीवन मूल्य, पंच महायज्ञ, षोडश संस्कार, तीन ऋण, भारतीय आयुर्वेद पद्धतियाँ, भारतीय शिक्षा पद्धति, वैदिक ज्ञान, उपनिषदीय गूढ़ विद्यायें, पुराणों में निहित व्यवहारिक ज्ञान, कौशल की अथाह सामग्रियाँ, शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य को सम्यक आकार देने वाली अष्टांग योग पद्धतियाँ, प्रकृति के प्रति भारतीय साहित्य में निहित अद्भुत पोषण, स्वास्थ्य व संरक्षण संचेतना, दर्शन शास्त्रों में व्याप्त आध्यात्मिक ऊर्जायें विभिन्न शक्तियों रूप धारण कर विश्व के कण-कण में भारतीय ज्ञान परंपराओं की सुवास बनकर अभिव्यक्त होती हैं, जो पाश्चात्य संस्कृतियों, ज्ञान, अनुसंधान, कर्मकांड सभी का आधार होकर सौंदर्य तेज के रूप में विश्व को आलोकित कर रही हैं। इन ज्ञान परंपराओं में हिंदी साहित्य अपने अनुपम विशिष्ट उदाहरण रचता रहा है। आज भी हिंदी साहित्य उद्भव से निकलने वाली ज्ञान निर्झरिणी जन-जन के हृदय को पतित-पावन करने में सक्षम है।

शब्द कुंजी :- परंपरायें, ज्ञान, कौशल, साहित्य, हिन्दी विधायें, भारतीय, संस्कृति।

प्रस्तावना :- हिंदी साहित्य जगत ज्ञान का वह सूर्य है, जो विभिन्न विधा रूपी रश्मियों से चमत्कृत होते हुए संपूर्ण संसार को आलोकित करता है। भारतीय ज्ञान परंपरा को प्रवाहित करने वाले इस साहित्य सूर्य की ओर यदि दृष्टिपात किया जाए तो गद्य, उपन्यास, कहानी, संस्मरण, एकांकी, नाटक, रिपोतार्ज, यात्रा साहित्य आदि रश्मियों के रूप में यह संसार की विभिन्न यथार्थ भावनाओं को समाज के समक्ष प्रकाशित करने में अग्रणी हैं। यह जनसामान्य को नवीन चेतना, जागरूकता, सजगता की ओर लेकर जाता है। इस विषय के किसी भी पक्ष पर दृष्टिपात करने से पूर्व ही यदि परंपरा शब्द की व्याख्या की जाये, तो परंपरा वह संपत्ति है जो बिना रुके सतत् गति से अपने कर्म पथ की ओर अग्रसारित होती रहती है। यह परंपरा अपने अंदर समेटे हुए ज्ञान को चारों ओर प्रकीर्ण करते हुए चारों ओर व्याप्त दुख, वेदना को अपने अंदर समाहित करते हुए कल्पना और भाव से उसमें उर्जा भर उसे जनमानस तक पहुँचाती है और इस प्रकार सुखी मानव के हृदय में एक ऐसी जागृति प्रदान करती है जिससे दूर-दूर तक व्यक्ति एक दूसरे के साथ जुड़कर सद्भावनाओं को अंगीकार करता है। यह परंपरा ज्ञानस्वरूप है, चेतना स्वरूप है, संस्कृति स्वरूप है, नैतिक गुण सस्वरूप है। इसलिए यह परंपरा नित्य नवीन है और नवाचार से युक्त है। । परंपरा एक मान्यता के रूप में भी संचालित होती चली जाती हैं। जो जीवन को नवीन आलोक देने वाली होती हैं, नये मूल्यों से जोड़ने वाली होती हैं, नये ज्ञान का प्रतीक होती हैं। वो मान्यताएँ धीरे-धीरे परंपराओं के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं और जन शक्ति द्वारा उनका पालन प्रारंभ हो जाता है। भारतीय ज्ञान परंपराओं की बात करें तो ये भारत की मिट्टी में बसी हुई हैं जो उसके वैदिक, पौराणिक, दार्शनिक, साहित्य ज्ञान के रूप में निरंतर मानव मनीषा का विषय होकर अग्रसारित होती चली जा रही हैं। भारत वर्ष की सबसे सुंदर, सुदृढ़ और शक्तिशाली परंपरा, साहित्य परंपरा है जो प्राचीन काल से ज्ञान का मूल स्रोत रही है। जिसने विभिन्न संस्कृतियों, सभ्यताओं को अपनी वाणी हिन्दी के माध्यम से परिष्कृत और परिमार्जित किया है। जन भाषा हिन्दी ने अपनी सरलता, सरसता, सुगमता तथा सशक्तता से भारतीय ज्ञान परंपराओं को साहित्यिक धरातल पर व्याप्त कर दिया है।

साहित्य लेखन की परंपरा

प्राचीन युग में साहित्य के इतिहास से संबंधित स्वतंत्र ग्रंथ लिखने की परंपरा भारत में ही नहीं अपितु पश्चिम में भी नहीं मिलती। फिर भी पूर्ववर्ती कवि एवं साहित्यकारों के नामोल्लेख करने की प्रवृत्ति अनेक भारतीय लेखकों में दृष्टिगोचर होती है। जिससे साहित्य का इतिहास लिखने में सहायता प्राप्त होती है। भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में अपने से पूर्ववर्ती आचार्यों के नामों का उल्लेख किया है। पाली, प्राकृत और अपभ्रंश में भी इसी प्रकार का उल्लेख प्राप्त होता है। हिंदी में महाकवि तुलसी ने भी अपने से पहले राम गुणगान करने वाले कवियों के नामों का उल्लेख किया है। रामचरित मानस में वह कहते हैं-

"वाल्मीकि नारद घट योनी,

निज-निज मुखन कही निज होनी।।

इस प्रकार तुलसीदास के बाद में भी हिंदी में इस प्रकार के अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं जिन्होंने अपने पूर्ववर्ती कवियों का वर्णन किया है। यह परंपरा हिंदी साहित्य में आगे तक चली है।

गुरु शिष्य परंपरा

भारतीय ज्ञान परंपराओं में गुरु शिष्य परंपरा का अपना अनूठा ही स्थान है, जो युगों-युगों से भारत को ही नहीं पूरे विश्व को प्रकाशित करती रही है। यदि गूढ़ चिंतन किया जाये तो शिक्षण परंपरा वह परंपरा है जो प्रत्येक क्षेत्र, विषय और पदार्थ के ज्ञान से जोड़कर विश्व के कण-कण को आलोकित कर रही है। गुरु-शिष्य प्रणाली के रूप में ऋषि मुनियों ने खुले आसमान के नीचे घने वृक्षों की छाया में प्राकृतिक वातावरण के मध्य अपने शिष्यों को आध्यात्मिक अनुभूतियों के दर्शन कराये हैं। यही नहीं उन्होंने समस्त विद्याओं का दान कर अपने शिष्यों को ज्ञान का आलोक प्रदान किया है और उनके समस्त संशयों को समाप्त किया है जिसका उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कबीरदास जी कहते हैं कि,

गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूं पाय।
बलिहारी गुरु आपणी जिन गोविन्द दियो बताय।।

भारतीयों की यह ज्ञान परंपरा विश्व में अपने चरण पसार चुकी है। आज वैश्विक संस्कृति भारतीय संस्कृति की सराहना करते हुए, प्रकृति की ओर लौटने की बात करती है। विभिन्न दार्शनिकों ने प्रकृति के मध्य शान्त वातावरण में विद्यार्थियों के बौद्धिक विकास को महत्वपूर्ण एवं उद्देश्यपूर्ण बताया है। बड़े-बड़े पाश्चात्य शिक्षा दार्शनिक भारतीयों की इस प्रणाली का वैज्ञानिक रूप से समर्थन करते हैं। उनका मानना है कि प्राकृतिक वातावरण पूर्ण स्वच्छ और स्वस्थ होता है। उसका निर्मल शांत स्वरूप विद्यार्थी को न केवल आत्मिक, मानसिक व बौद्धिक रूप से वरन् शारीरिक रूप से भी स्वस्थ रखता है और स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है। अतः आज विश्व भारत की इस परंपरा का हृदय से स्वागत करता है और कहता है, कि भारतीयों की परंपरायें वैज्ञानिक दृष्टि से पूर्ण प्रासंगिक हैं।

समाज सुधार की परंपराओं का विकास

भारतीय वैदिक परंपरायें अत्यधिक समुज्ज्वल और प्राकृतिक रही हैं। बालक के मानसिक, बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक विकास के लिए उसमें बाल्यकाल से ही जीवनमूल्यों का बीजारोपण किया जाता था। लेकिन अनेक स्थलों पर परंपरा के साथ-साथ अंधविश्वास का भी आगमन होता चला जाता था, जिसे दूर करने के लिए सदैव ही साहित्य अग्रणी रहा है। महाकवि कबीरदास जी ने अपनी साखियों के माध्यम से समाज को सुधारने और सही दिशा दिखाने की परंपरा का जो प्रवर्तन किया वह परंपरा के रूप में हिंदी साहित्य जगत के मूल में बस गया। अंधविश्वासों का विरोध करते हुए एक स्थल पर वह कहते हैं –

"जस काशी तस मगहर
ऊसर हृदय राम सर होई"।

कबीरदास आगे भी जात-पात का विरोध करते हुए कहते हैं-

"जोगी गोरख गोरख करै,
हिंदी राम न उखराई।
मुसलमान कहे इक खुदाई,
कबीरा को स्वामी घट-घट रह्यो समाई।"

यहाँ कबीरदास इन पंक्तियों के माध्यम से यह बताना चाहते हैं कि, परब्रह्म परमात्मा एक ही है। कोई उसे राम कहे, कोई गोरख कहे, कोई अल्लाह कहे लेकिन वह एकाकार ब्रह्म ही सबको व्याप्त किये हुए है। अतः मानव संस्कृति को भी कल्याणमयी रुप धारण करके एक-सा रूप धारण करना चाहिए।

साहित्य में निहित अद्भुत भक्ति परंपरा

आज संपूर्ण विश्व वैदिक परंपराओं में समाई भक्ति परंपरा की आचरण शक्ति को अपना रहा है। इन परंपराओं का वैश्विक धरातल पर गहरा प्रभाव पड़ा है। तपोमई भक्ति से युक्त जीवन शैली ने मानव को तनाव मुक्त वातावरण प्रदान किया है। सात्विक आहार-विहार ने उसे सुख पूर्ण जीवन दिया है। आज स्वास्थ्य सञ्जीवनी बनकर भक्ति प्रणाली पूरे विश्व के द्वारा सराही जा रही है। संपूर्ण संसार बड़े-बड़े ऋषि मुनियों, कवियों, संतों, साहित्यकारों के द्वारा बताई गई भक्ति शैलियों को अपना रहा है। यह भारतीय ज्ञान परंपराओं का प्रत्यक्ष प्रभाव है।

प्रेमाभक्ति और साध्यभक्ति में प्रेम को मुख्य आधार बनाया गया है तथा गेय पदों के द्वारा अपनी भक्ति, श्रद्धा और भगवान के प्रति समर्पण की बात प्रमुखतः उल्लेखित है। मीरा और जायसी ने इस भक्ति का सर्वाधिक प्रचार किया। जायसी ने लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक ईश्वरानुभूति कराई है। मीरा ने तो श्रीकृष्ण को ही सर्वस्व मान लिया था-

"मेरो तो गिरधर गोपाल,

दूसरो न कोय"।।

इसी प्रकार भक्ति रस में स्नात कबीर के ब्रह्म भी राम ही हैं लेकिन उनका कोई आकार नहीं है। कबीरदास इसके स्पष्टीकरण में कहते हैं-

"दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना।

राम नाम का मरम है आना"।।

कबीर के काव्य में ईश्वर की कोई स्पष्ट रूपरेखा नहीं दिखाई देती। कहीं राम को भक्ति का आलंबन बनाया गया है तो कहीं ध्यान का।

ज्ञान परंपरा और साहित्य

संपूर्ण हिंदी साहित्य ज्ञान का वह कल्पवृक्ष है, जिसका एक-एक पल नवीन कलाओं और भावनाओं से मंडित थे। हिंदी साहित्य ने अपने अंतर में 64 कलाओं और 14 विद्याओं को समाया हुआ है। सात द्वीपों वाली यह पृथ्वी माता चार वेद ऋक्, यजु, साम और अथर्व, छह वेदांगों शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, छन्द और ज्योतिष सहित धर्मशास्त्र, आन्वीक्षकी, मीमांसा और स्मृतियाँ मिलकर 14 विद्याओं से मण्डित तथा 64 कलाओं से सुशोभित है। जिससे निसृत परंपरायें पूरे विश्व को ज्ञान, विज्ञान, दर्शन, कला, कौशल और अनुसंधान से जोड़ रही हैं।

महाकवि कबीरदास स्वयं ज्ञान को महत्त्व देते हैं। उनका मानना है कि, परमात्मा की प्राप्ति ज्ञान और प्रेम के आधार पर ही हो सकती। वह कहते हैं कि,

"पोथी पढ़-पढ़ जुग भया,भया न पंडित कोय।

ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।।"

इसी प्रकार एक स्थल पर कबीरदास जी कर्म करने और कथनी करनी में भेद न करने की बात का ज्ञान देते हुए दिखाई देते हैं। उनके ये शब्द समाज को एक नई शिक्षा की ओर ले कर जाते हैं। एक ऐसी शिक्षा जो वास्तव में सच्चे हृदय से प्रारंभ होकर सत्य का ज्ञान कराने में सक्षम होती है-

"कथणीं कथी तो क्या भया, जे करणी नाँ ठहराइ।

कालबूत के कोट ज्यूँ, देषतहीं ढहि जाइ॥

जैसी मुख तैं नीकसै, तैसी चालै चाल।

पारब्रह्म नेड़ा रहै, पल में करै निहाल॥"

भारतीय ज्ञान परंपरा और संत साहित्य

भारतीय ज्ञान परंपराओं में निहित संत साहित्य अपने आप में अद्वितीय है। संत किसी के शत्रु नहीं होते वरन् निष्काम होते हैं। ईश्वर लीन होते हैं। प्रेम के उपासक होते हैं। कबीरदास संत महिमा का गुणगान करते हुए कहते हैं-

"निरवैरी निहकामता, साँई सेती नेह,
विषिया सू न्यारा रहै, संतहि का अंग एह।"

वास्तव में संतों की विशेषता सत्संगति के रूप में परिलक्षित होती है। संत तो मार्ग से भटके हुए व्यक्तियों को सत्य मार्ग पर लाने की क्षमता रखते हैं। इसलिए कबीरदास आगे कहते हैं-

"संत न छाड़े संतई, कोटिक मिले असंत।
चंदन भुवंगा बैठिया, तउ सीतलता न तजंत"।

इस प्रकार भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित संत साहित्य अपने आप में अद्भुत क्षमता को धारण करने वाला है। हिंदी साहित्य की ये परंपरा समाज को सदैव से नयी दिशा, आयाम देने में सक्षम रही है और आज भी दे रही है।

निष्कर्ष

अंत में कह सकते हैं, कि भारतीय ज्ञान परंपराओं का विश्व पर अमिट प्रभाव है। वैश्विक धरातल पर चाहे राजनीति हो या सामाजिकता, संस्कृति हो अथवा सभ्यता, ज्ञान हो अथवा कौशल, योग हो अथवा व्यवहार, भाषा हो या विज्ञान, खोज हो अथवा अनुसंधान, तर्क हो या विश्लेषण सभी क्षेत्रों में चारों ओर भारतीय ज्ञान परंपरायें अपना प्रभाव अभिव्यक्त कर रही हैं। इन्हीं ज्ञान परंपराओं से पाश्चात्य संस्कृति, कौटिल्य की राजनीति की शिक्षा लेती है तो महर्षि पतंजलि की योग शिक्षाओं से अपने आप को स्वास्थ्य की ओर लेकर जाती है। चरक की संहिता अनुसंधान क्षेत्र को सफल बनाती है, तो सामवेद की गान विद्यायें उसको मधुर संगीत से जोड़ती हैं। वही हिंदी की समरसता प्रत्येक कण-कण को सरलता, सहजता और करुणा से आर्द्र कर देती है। भारतीय ज्ञान परंपरा में हिंदी साहित्य, वह हीरकमणी है जिसमें समस्त भावनायें समाहित हैं। उसमें भक्ति भी है, ज्ञान भी है, शिक्षा भी है और समाज सुधार भी। उसमें बाल मनोरंजन भी है और युवाओं का दिग्दर्शन भी। इस प्रकार हिंदी साहित्य भारतीय ज्ञान परंपरा का एक मुख्य और अतुलनीय स्रोत है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ० मीरा, 'मध्ययुगीन हिन्दी कृष्ण भक्तिधारा', हिन्दुस्तान एकेडमी, 1968,
2. डॉ० वासुदेव सिंह- कबीर (साहित्य और साधना), अभिव्यक्ति प्रकाशन, 847, इलाहाबाद, संस्करण 1994 ई0
3. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2013
4. संपा. डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल हिन्दी साहित्य का इतिहास', मयूर पेपरबैक्स, दिल्ली, 2015
5. संपा. डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास', मयूर पेपरबैक्स, 2016.
6. हजारी प्रसाद द्विवेदी कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चौबीसवाँ संस्करण, 2018.
7. वैदिक साहित्य और संस्कृति
8. योगेन्द्र सिंह- संत रैदास, लोकभारती प्रकाशन, तीसरा संस्करण 2019 ई०